Chapter. 7

अध्याय 7

विधिक क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग : समस्याएं एवम् समाधान

- स्वतंत्रता – पूर्व काल में विधि क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग की स्थिति
- विधि क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग : स्वतंत्रता के पश्चात् की स्थिति

अध्याय 7

विधिक क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग समस्याएं एवम् समाधान

स्वतंत्रता-पूर्व काल में विधि क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग की स्थिति

विधि का सम्बन्ध सभी मनुष्यों से होता है लेकिन कुछ के साथ इसका सम्बन्ध एक विशेष प्रकार का हो सकता है। यदि एक मनुष्य एक अपराध करता है, किसी करार के निष्पादन में विफल हो जाता है, तो उसको दण्ड दिया जाएगा या क्षतिपूर्ति का दण्ड दिया जाएगा और वह अदालत में यह नहीं कह सकेगा कि वह नहीं जानता था कि उसका आचरण विधि के विपरीत था।[1] विधि क्षेत्र के कार्यकलापों के बारे में इस वाक्य से पता चल सकता है। इसके अनुसार विधि का सम्बन्ध प्रधानतः व्यक्ति, सम्पति और किसी करार से होता है। डॉ. मोतीबाबू ने हिन्दी विधि-शब्दावली में विधि को इस प्रकार से परिभाषित किया है - 'विधि मानव-आचरण को विनियमित करने वाले उन सामान्य नियमों अथवा सिद्धान्तों का संग्रह है जिनको न्यायालय न्यायकार्य में मान्यता देते हैं। इस प्रकार का प्रत्येक नियम अथवा सिद्धान्त विधि कहलाता है।'

विधि के लिए भाषा तथा शब्दों का प्रयोग सदैव होता रहा है। इस वर्तमान काल में तो शब्दावली का विधि क्षेत्र में विशेष महत्व हो गया है। मानव अधिकार एवम् कर्तव्यों का जगत आज प्रायः विधिवाक्यों द्वारा परिभाषित तथा विनियमित होता है।

1 एवरीबडीज बुक ऑफ लॉ - द्वारा एस. रामास्वामी अय्यर

विधि शब्दावली की अस्थिरता इस समग्र जगत में अस्थिरता लाने के लिए पर्याप्त है। जीवन और मृत्यु की सीमा विधि में शब्दों द्वारा ही अंकित होती है और शब्दावली की किंचित् अव्यवस्था इस सीमा को ही अव्यवस्थित कर सकती है।[1] विधि क्षेत्रों से इतर क्षेत्रों में लेखक को अपनी भाषा में परिवर्तन का प्रायः पूरा-पूरा अधिकार रहता है, किन्तु विधि-लेखों में परिवर्तन करने का अधिकार कुछ स्थानों पर तो होता ही नहीं यदि होता भी है तो बहुत सीमित। विधि-निर्माता का उद्देश्य यही होता है कि उसकी कृति का अर्थ ठीक-ठीक समझा जा सके तथा उसका यथावत् पालन किया जाए। भाषा के बनाव श्रृंगार से उसका कोई मतलब नहीं होता, उसका ध्यान अपने आशय पर केन्द्रित होता है। इसलिए विधि में भाषा की अभिधा शक्ति का आश्रय ही सर्वोत्तम समझा जाता है।[2]

यह अपेक्षित है कि विधि की भाषा सरलतम हो। किन्तु ऐसा इसलिए सम्भव नहीं क्योंकि सदैव सरलतम प्रचलित शब्दों द्वारा विधि का भाव स्पष्ट करना मुश्किल ही नहीं असम्भव भी प्रतीत होता है। कभी-कभी सरलता के लोभ में अर्थ का अनर्थ हो जाता है। सरल शब्दावली के प्रयोग से विधिवाक्य प्रत्यक्ष रूप से सरल तो हो सकता है, किन्तु अन्ततः विवादास्पद बन सकता है, जबकि प्राविधिक शब्दावली कुछ क्लिष्ट भले ही प्रतीत हो किन्तु उसका अर्थ निश्चित हो जाता है। अर्थ की निश्चितता की विधि में इस कदर आवश्यकता होती है कि पाठक प्रयास करके भी निश्चित से भिन्न अर्थ न निकाल सकें।

सामान्यतः बोलचाल में भावों की विभिन्नता का विशेष ध्यान कम ही रहता है। किन्तु विधि में इस ओर विशेष ध्यान रखना पड़ता है। जैसे, किसी व्यक्ति पर अपराध का दोष लगने पर सामान्य बोलचाल में उसे अपराधी या मुजरिम कहा जाने लगता है चाहे उसके ऊपर अपराध अभी सिद्ध न भी हुआ हो। विधि क्षेत्र में जब तक व्यक्ति द्वारा किए गए अपराध का आरोप विचाराधीन हो तह तक वह 'अपराधी' न कहलाकर

1 हिन्दी विधि शब्दावली : डॉ. मोतीबाबू पृ. 45

2 हिन्दी विधि शब्दावली : डॉ. मोतीबाबू पृ. 46

'अभियुक्त' या 'मुलजिम' ही कहा जाएगा। इसी प्रकार विधि क्षेत्र में सामान्य शब्द भी विशिष्ट अर्थ के द्योतक बन जाते हैं। उनका ठीक अर्थ विधिज्ञान से शून्य व्यक्ति नहीं जानता। जैसे 'चोरी' शब्द की भारतीय दण्ड संहिता की धारा 378 में दी गई परिभाषा सामान्य भाव में इस शब्द के अर्थ से भिन्न होती है। इसलिए विधिक्षेत्र में शब्दों की पारिभाषिकता का विशेष महत्व होता है।

प्रयुक्त विधि -शब्दावली उस समय की है जब देश में मुसलमानों का प्रभुत्व समाप्त प्राय हो रहा था, किन्तु हिन्दू-सत्ता के उदय के स्थान पर अंग्रजों की सत्ता लगभग स्थिर होने लगी थी। सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन की विफलता के बाद अंग्रेजी साम्राज्य की जड़ें मजबूत हो गईं थीं। अंग्रेजों ने अपने शासन के प्रारम्भ में ही समस्त उत्तरी भारत में प्रायः फारसी को अपनाया था। बाद में उन्होंने उर्दू को स्वीकार किया जिसमें फारसी की सारी विधि-शब्दावली को अपना लिया था।[1] राजस्थान की देशी रियासतों में लगभग सभी हिन्दू राजाओं ने जो सैंकड़ों वर्षों से मुसलमानों का आधिपत्य स्वीकार कर चुके थे, अपने विधि और न्याय प्रशासन में फारसी को ही अपना रखा था। उसके बाद जब हिन्दी को न्यायालयों में प्रयोग के लिए स्वीकार किया गया तब भी परिस्थितिवश हिन्दी शब्दावली का विशेष प्रयोग अथवा प्रचार न हो सका।

सन् 1857 के बाद के कालखण्ड में विधि क्षेत्र में प्रयुक्त शब्दावली के अवलोकन के लिए नीचे कुछ तत्कालीन दस्तावेजों का उल्लेख किया जा रहा है। उक्त दस्तावेज राष्ट्रीय अभिलेखागार, दिल्ली तथा राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर में आज भी सुरक्षित हैं। निम्नलिखित उदाहरणों में, जो कि विधिकार्य सम्बन्धी पत्र हैं, हम पाएंगे कि इनमें हिन्दी के तत्सम या तद्भव शब्दों के साथ विदेशी किन्तु हिन्दी में घुल मिल गए शब्द ही अधिक हैं। इनमें प्रयुक्त लिपि नागरी है तथा व्याकरण भी हिन्दी का ही है। अरबी-फारसी के शब्दों का जो प्रयोग किया गया है, उनमें अधिकांश हिन्दी के अंग बन चुके हैं।

---

1 हिन्दी विधि शब्दावली : डॉ. मोतीबाबू, पृष्ठ 351

उदाहरण 1 : जनाबेआली

बतामील हुक्म के तलबी मुदाअले की गई लेकिन हाजीर न हुवा मुदई वास्ते पैरवी हाजीर आया अजब बन्दी के मुदई अपनी मुराद पै पोहोचे चुका हो लिहाजा मिसल पेस करता हूँ

तारीख जनवरी 31 सन् 1885

रपोट हुकम व. अहेमद मु.

मुदाअले की तलबी हो व मुदई की दरियाफत किया जावे ता. 31 जनवरी 1885

ह. उर्दू में (अपठनीय)[1]

उपर्युक्त उदाहरण आजकल सरकारी पत्रावली पर टिप्पणियाँ लिखने की एक प्रणाली का रूप है। इसमें जो शब्द पाए गए हैं, उनका वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है :

हिन्दी	अरबी-फारसी के हिन्दी में घुल-मिल गए शब्द	अरबी-फारसी	अंग्रेजी
हुवा	हुकम, हाजीर, मुदई,	जनाबेआली	रपोट
आया	पेरैबी, मीसल,	बतामील	
अपनी	पेस, तारीख,	तलबी	
पोहोचे	दरियाफत	मुराद, हाजा	

इस उदाहरण से इस बात की पुष्टि होती है कि अरबी-फारसी के हिन्दी में घुल-मिल गए शब्दों का ही बाहुल्य रहा है। हिन्दी के व्याकरण और नागरी लिपि का प्रयोग भी बना रहा है। कहीं भी पूर्णविराम या अर्द्धविराम चिन्ह आदि नहीं लगाए गए हैं।

उदाहरण 2 : रूबकार महकमा मोहतारीम आलिया कौन्सिल सीगे फौजदारी महकूमा

24 जनवरी सन् 1924 ई. हुकम है कि

1. प्रतापगढ़ रियासत सन् 1900 ई. पूर्व का रिकार्डः फोल्डर नं. 4062, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

अब तक यह अमलदरामद है कि निज़ामत हाय से जो मुलज़िमान चालान होकर आते हैं और नाज़िर महकमे अपील बज़रिये रुक्का जेल में आसामियान को भेजता है, इसमें तबालत होती है, आसामियान परेशान होती हैं लिहाज़ा जुमले निज़ामत हाय को इत्तिला दी जावे कि जब किसी मुकदमे के मुलज़िमान किसी महकमे सदर में चालान किए जावें तो कैफ़ियत उस महकमे के नाम इत्तिलाई लिखा दी जाया करे कि जिस महकमे के मुतआल्लिक आसामियान तलब हो सकें और इसमें सहूलियत भी है आयन्दा इसका इन्तिज़ाम कर दिया जावे, जेल और महकमे अपील को इत्तिला लिखी जावे और निज़ामतों को यह भी लिख दिया जावे कि आलाते जर्ब बगैरा सामान जो अब तक जिस तरह महकमे मुतअल्लिका में भेजते हैं, भेजते रहें, ता. 24 जनवरी सन् 1924 ई.[1]

By order
CHAUBEY BISVESVARNATH
Secretary State Council, Jaipur

जयपुर रियासत में उर्दू-फारसी का प्रयोग सम्भवतः सर्वाधिक सबसे पहले प्रारम्भ हुआ और बाद तक चलता रहा। इस उदाहरण में शब्दों का वर्गीकरण निम्नानुसार है :-

हिन्दी	अरबी/फारसी के हिन्दी में घुल-मिल गए शब्द	अरबी-फारसी	अंग्रेजी
अब,तक, यह,हैं	महकमा, आयन्दा, इत्तिला	रूबकार, मोहतशिमा,	कौन्सिल,
होकर, आते हैं	सहूलियत, फौजदारी,	आलिया, सीगे,	जेल,
भेजता है, इसमें	मुलाहिजे, कैफियत, तलब,	मुबर्रिख़ा,	जनवरी
होती है, दी जावे,	हुक्म, चालान, रुक्का,	अमलदरामद, निज़ामत,	अपील

1 जयपुर गजट, जिल्द 46, 15 फरवरी 1924 नवम्बर 4327 राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

हिन्दी	अरबी/फारसी के हिन्दी में घुल-मिल गए शब्द	अरबी-फ़ारसी	अंग्रेजी
किसी, लिख,	आसामियान, तबालत,	मुलाज़िमान, नाज़िर	
दिया जावे,	परेशान, लिहाजा, सदर,	बज़रिये, जुमले, हांय,	
समान	मुतआल्लिक, इन्तिज़ाम	इत्तिलाई, जर्ब, आलाते	

उपर्युक्त आदेश में अधिकांशतः हिन्दी के तथा अरबी/फारसी के हिन्दी में घुलमिल गए शब्द ही मिलते हैं। नीचे दिए गए आवेदन में हम देखेंगे कि इसमें प्रयुक्त शब्दावली जनता की शब्दावली है और इसमें हिन्दी-संस्कृत शब्दों का बाहुल्य है।

उदाहरण 3 : ओऽम् डायरी नं. 105/51039

वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

आर्य समाज, सरदारपुरा, जोधपुर

पत्र संख्या 494 ता. 5 अक्टूबर 1939

मिती अश्विनी कृ. 7, 1966 वि.

श्री मद्दयानन्दाब्द 113

सेवा में,

श्रीमान् चीफ़ मिनिस्टर साहब महोदयजी

श्रीमन्नमस्ते

आर्य समाज.सरदारपुरा (जोधपुर) की 4.10.39 की यह सभा प्रस्ताव करती है कि जोधपुर सरकार द्वारा तैयार किया गया शादी कानून का मसविदा मारवाड़ की प्रजा के लिए अत्यन्त आवश्यक लाभदायक और उपयोगी है। हम इसका हृदय से समर्थन करते हुए महाराजा साहब का बड़ा आभार मानते हैं तथा उनकी सरकार को आन्तरिक धन्यवाद देते हैं और उनसे यह प्रार्थना करते हैं कि मारवाड़ की जनता के इस महान हितकारक कानून को मारवाड़ की तमाम जातियों पर शीघ्रातिशीघ्र लागू

करके मुल्क और प्रजा का कल्याण करें।[1]

5.10.39 भवदीय

ह.मंत्री

आर्य समाज सरदारपुरा, जोधपुर

उपर्युक्त पत्र से स्पष्ट होता है कि जनता अरबी-फारसी के हिन्दी में घुल-मिल गए शब्दों (शादी, कानून, मसविदा, तमाम, मुल्क) के साथ-साथ तत्सम, तदभव शब्दों (अश्विन, पत्र संख्या, सेवा में, महोदय, श्री मन्नमस्ते, सभा, प्रस्ताव, प्रजा, अत्यन्त, आवश्यक, लाभदायक, उपयोगी, हृदय, समर्थन, आभार, आन्तरिक, धन्यवाद, प्रार्थना, जनता, महान, हितकारक, जातियों, शीघ्रातिशीघ्र, कल्याण, मंत्री) का व्यवहार ही कर रही थी।

उदाहरण सं. 4 : सम्मन जज अदालत ठिकाना सबलपुर बाके,

फाइल 3/42-43 ता. 23-12-1943

बनाम मुदायला हीरालाल व मुखिया कौम खाती सा. गोगालि या पट्ठे ठि. हाजा

मुद्दई : रामकुंअर हीरालाल महाजन गोगालिया

मुद्दायल :बगतिया गुलिया खाती सा. गोगालिया

दावा सं. 80 रुपया

मुकदमे में मुन्दर्जे अनबान में मुद्दई ने दरख्वास्त पेश की है कि मुदायला हिमान के खिलाफ चन्द दफे सम्मान बजरिये रजिस्ट्री के पोस्ट जीवर जिला परवीन लेण गोदावरी भेजा गया था। मगर मुदायला विदेश में होने की वजह से तामील नहीं ले सका इसलिए हस्व आर्डर 5 रु. 20 जाब्ता दीवानी के माफिक गजट में शाया कराया जावे।

---

1 मेहकमा खास : गवर्नमेंट ऑफ जोधपुर, फाइल सं. सी/5, वोल्यूम 2, भेज रहेडसोशल अभिलेखागार, बीकानेर

लिहाजा जरिये सम्मन हाजा तुमको इत्तिला दी जाती है के ता. 29.2.1944 की पेशी पर असालतन या वकालतन हाजिर होकर अपना जवाब दावा पेश करो वरना बाद गुजरने इस पेशी के तुम्हारे खिलाफ यक तरफ कारवाई अमल में लाई जावेगी।

फकत बेरी साल सिंह

जज अदालत ठिकाना सबलपुर[1]

अंग्रेजी राज की स्थापना हुए इतना अधिक समय हो जाने पर भी विधि कार्यों में लगभग सभी राजस्थानी रियासतों में हिन्दी व्याकरण, नागरी लिपि तथा हिन्दी में घुले-मिले अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग होता रहा। यद्यपि अलवर रियासत में अच्छी हिन्दी का बहुत प्रयोग हुआ है किन्तु विधि-कार्य में अरबी-फारसी शब्दों की बहुलता ही दिखाई देती है।

अतः सन् 1857 से स्वतंत्रता प्राप्ति तक की अवधि के दौरान विधि-कार्यों में हिन्दी का प्रयोग सतत् होता रहा। लगभग सवा सौ वर्षों के कालखण्ड के अनेक ऐसे दस्तावेज, आज्ञा-पत्र नियमावलियाँ और खरीते हैं जिनसे हिन्दी के विधि कार्यों में प्रयोग की व्यापकता पर भरपूर प्रकाश पड़ता है।

अलवर रियासत में सन 1918 से ही उर्दू का स्थान हिन्दी ने ले लिया था और वहाँ कानून बनाने की परंपरा 1923 में व्यवस्थित रूप में थी तथा कानूनों को गजट (राजपत्र) में प्रकाशित कराया जाता था। इन नियमों को हिन्दी में बनाया गया था। इनकी भाषा से यह प्रकट होता है कि विधि कार्यों के लिए हिन्दी बहुत पहले से समर्थ रही हैं। अर्जी पर हिन्दी में हस्ताक्षरों की अनिवार्यता रखी गई थी और मजमून को भी साफ तौर पर हिन्दी में लिखे जाने का आदेश दिया गया था।[2] निम्नलिखित उदाहरण में सुन्दर हिन्दी के प्रयोग का उत्तम उदाहरण देखने को मिलता है :-

---

1. फाइल सं. जो-441 (ज जू) दी जौधपुर गवर्नमेन्ट गजट जनवरी 22 1944, राज. राज्य अभिलेखागार, बीकानेर
2. राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर, अलवर फाइल से. अल 23/ज.

अलवर स्टेट गजट

(विशेषांक)

सं. 30 अलवर, शुक्रवार तारीख 25 मई सन् 1923 ई. जिल्द 15

श्री सवाई महाराज वीरेन्द्र शिरोमणी देव ने रामदयाल की प्रार्थना के तार पर निम्नलिखित आज्ञा प्रदान की है :

चूंकि अपराध का दण्ड अलग दिया जा चुका है और हमारे विचार से वह भोग भी लिया है अब वह जो दया का प्रार्थी है वह आत्म गोपन के कारण है जिसका दण्ड उसकी सम्पत्ति का 11000/- में निलाम किया जाना हुआ है। चूंकि मनुष्य वृद्ध है और अब वास्तव में पश्चातापी है और अपने अपराध का दण्ड भी भोग चुका है हम सहर्ष पिछले दण्ड के लिए दया प्रदान करते हैं और उसकी सम्पत्ति के निलाम का धन जो राजकोष में जमा है उसको लौटा दिया जाए।[1]

श्रीप्रभु आदेशानुसार

हुकम सिंह, गृहमंत्री

हिज हाइनेस गवर्नमेंट, अलवर

उपर्युक्त आदेश में हमें भाषा सौंदर्य के साथ भावों के सौंदर्य का सुन्दर देखने को मिलता है। विधि कार्यों में हिन्दी के प्रयोग की परिपाटी सतत् चलती रही। सन् 1941 का एक उदाहरण प्रस्तुत है :

अलवर राजकीय गजट

सं. 14 अलवर सोमवार ता. 7 ऐप्रिल सन् 1941 ई. खण्ड 34 परि.- 1 गवर्नमेंट आर्डर्स, रुल्स, अपाइन्टमेंट्स आदि

जुडीशियल ब्रांच

नं. 40 तारीख 27 मार्च 1941

वकीलों के अमले मुंशीवान में अनिच्छित शख्सों की भरती रोकने के लिए,

निम्नलिखित नोटिफिकेशन जारी किया जाता हैः

आइन्दा कोई वकील किसी ऐसे शख्स को अपना मुंशी नहीं रक्खेगा जब तक वह शख्स किसी वकील के पास कम से कम 3 साल तक मुंशी न रहा हो या कि आरायजनवीस न हो या रियासत अलवर का स्पेशल मिडिल इम्तिहान पास न किया हो और हिन्दी की अच्छी योग्यता न रखता हो, बशर्ते कि ऐसा कोई शख्स मुंशी नहीं रक्खा जाएगा जो कि पेशा वकालत की दलाली करने वाला करार दिया गया हो या किसी ऐसे जुर्म का मुजरिम करार दिया गया हो जिससे उसका चाल-चलन खराब जाहिर हो या गवर्नमेंट सर्विस से डिसमिस हो गया हो।[1]

कुंवरसैन

चीफ जस्टिस

उपर्युक्त आदेश में वकीलों के मुंशियों के लिए हिन्दी की अच्छी योग्यता का होना अनिवार्य आवश्यकता बताई गई है। आदेश में अंग्रेजी, अरबी-फारसी तथा हिन्दी के प्रचलित शब्दों का अच्छा समन्वय हुआ है। वस्तुतः भाषा के उस रूप को रखने का प्रयास लगता है जो सर्वसाधारण की समझ के बाहर न हो। हिन्दी के राजभाषा रूप के लिए यह एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है कि भाषा सरल और सुबोध हो। इस अधिसूचना (नोटिफिकेशन) में 'अनिच्छित' शब्द का प्रयोग 'अवांछित' के लिए किया गया है जो अंग्रेजी के 'Undesirable' का अनुवाद है।

उदयपुर रियासत के महाराणा सामान्यतः राष्ट्रवादी और स्वाभिमानी रहे हैं। स्वाभिमान की ज्वलंत परम्परा के अनुकूल ही रियासत के विधि कार्यों में हिन्दी का प्रयोग होता रहा है। राजपुताना रेजिडेंसी की ओर से भी महाराणाओं के साथ हिन्दी में पत्र-व्यवहार होता रहा है। हिन्दी के प्रयोग की सशक्त परम्परा के एक उत्कृष्ट उदाहरण का यहाँ उल्लेख किया जा रहा है :

---

1. राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर फाइल सं. अलवर 41/जू-जू/1

नकल षरीता (खरीता) आज तरफ साहब कलां बहादुर वनांम (बनाम) महाराणे साहब बहादुर रईस ऊदेपुर (उदयपुर) ता. 25 फरवरी 1860 फागण सुदी 4, 1916 का।

अपरंच षरीता आपका लीषा (लिखा) हुबा (हुआ) फागण बदी 8 समत (संवत्) हाल का ईस (इस) मजमुन से के हाथी की राड (राड़), हुई जीस वषत (वख्त) अजीत सिंघ जी के और सीषां के आपस में गाली गलबो हुबो सो बांकी भुल से तरवार वाय ऊभारया फेर हमने पकड़ के ऊन के कैद कर दीया अब साहब कहें जी तरे (तरह) कैद राषां (राखां) वा मेवाड़ में से निकाले देवां वा जरी बालोकर के सीषां (सिक्खों) ने जषमानी (जख़्म) दीवाय देवां आया मजमुन सब पड़ने से मालुम हुवा आपको जाहर हो के हमारी दानस्त में ऊस (उस) अजीवसंघ जी पर पचास रुपये तो जुरवाना (जुर्माना) करके सीष जो जषमी हुआ है ऊस्को दिलवावे वास्ते रजाबंदी (रजामन्दी) ऊस जषमी मजकुर के और पचास रुपये सब सीषों के वास्ते षुस (खुश) करणे (करने) के बतौर जयाफत के ऊस से दीरवायें और स्वाय ईस जुरवाने के जेस कि आप मुनासव समजें (समझें) अछी तरे सजा देवें ताके आयदा और लोगों को भी ऐसी बातों से ईवरत होय और आपके मिजाज की षुसी लीषावसी मूंड राजनग मारफत वकील के दीया गया।[1]

उपर्युक्त पत्र में कहीं भी विरामं या अर्धविरामों का प्रयोग नहीं किया गया। पत्र की भाषा में व्याकरण सामान्यतः खड़ी बोली का ही है। बीच-बीच में ब्रजभाषा के रूप भी देखने में आते हैं जैसे 'हुवो'। अन्त में 'लीषावसी' में राजस्थानी रूप के भी दर्श हो जाते हैं। एक और उदाहरण प्रस्तुत है :

अज स्माल काजेज कोर्ट शहर

तारीख 30.3.44 ई.

मु. नं. 187

1. राजपुताना रेजिडेंसी हिन्दी खरीता बुक 1856-60 नं. 55

भंवरलाल वल्द अंबालाल
सिंगट वाड्या सा.
शहर मुद्दई

श्री लाल वल्द कालूपोमेचा
सा. शहर
मुद्दायला

दावा रु. 50

बनाम श्रीलाल वल्द कालू कौम पामेचा साकिन शहर बमुकद्द में मुन्दर्जे अनवान तारीख 7.5.44 मिती बैशाख सुद 14 सं. 2000 वास्ते इनफिसाल कतई मुकर्रर की जाकर पेशी असालतन या वकालतन मय दस्तावेजान वक्त 11 बजे दिन क हाजिर अदालत हाजा मुका. काजेज कोर्ट होकर बगैर इजाजत अदालत वापस नहीं जाओ वर्ना तुम्हारी गैरहाजरी में कार्रवाईजाबता अमल में आवेगी।[1]

लेहर सिंह महता
जज स्माल काजेज कोर्ट
शहर

इन उदाहरणों से उदयपुर में विधिकार्यों में हिन्दी का पर्याप्त प्रयोग होना पुष्ट होता है। अरबी-फारसी के शब्द अवश्य भाषा में स्थान पाते रहे हैं किन्तु ये शब्द अधिकतर वे ही रहे हैं जो हिन्दी में घुलमिल चुके हैं।

जयपुर रियासत में अन्य रियासतों की अपेक्षा अरबी-फारसी का बोलबाला कुछ अधिक रहा है। विधिकार्यों में भी यद्यपि अरबी फारसी का प्रयोग होता रहा, तो भी हिन्दी का प्रयोग कम नहीं रहा और हिन्दी का स्थान बना रहा। सन् 1863 के इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि विधिकार्यों में हिन्दी-प्रयोग की परम्परा इस रियासत में कायम थी :-

कैफियत बनाम प्रतापसिंह सेषावत परसरामपुरा इ. जयपुर

ता. 11 नवम्बर, 1873 ई.

1. फाइल नं. स 44/ज. जु. 1, राज. राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

अपरंच कैफियत तुम्हारी मुलाहजह से गुजरी और तुमने शिकायत ठाकुर बसाबू बाबत गारत करने गांव वा ढा देना मकान और शिकायत राज जैपुर बाबत जबती गांव वा तजबीज करने वाराते देने गुषतारी ठिकाना तुम्हारे बेरे गिरधारी सिंह कू और शिकायत राजाजी खेतड़ी बावत तकरार धोली डूंगरी वगैरह और दरषास्त दादरसी अपनी लिखि सो मालूम हुई हो कि ऐसे मुकदमों में इस महकमह से कुछ हुक्म नहीं होता है इसलिए तुम्हारी कैफियत की नकल साहिब अजंट बहादुर जैपुर के पास भेज दी जावेगी तुमको जो कुछ अर्ज करना हो राज जैपुर में या साहिब मौसूफ की षिदमत में करो इति।[1]

इस पत्र में भी 'ख' के स्थान पर 'ष' का प्रयोग हुआ है। पत्र की भाषा में अरबी-फारसी के ऐसे शब्द हैं जो हिन्दी में घुलमिलकर हिन्दी का अंग बने हैं। इससे यह भी जाहिर होता है कि राजस्थान की बड़ी रियासतों के साथ ही नहीं अपितु छोटे ठिकानों और जागीरदारों आदि के साथ में भी हिन्दी में ही पत्र-व्यवहार चलता था।

अन्य रियासतों में भी कानूनों को अंग्रेजी के साथ हिन्दी में प्रकाशित करने की परम्परा चलती रही। यद्यपि अंग्रेजी का प्रयोग बढ़ता गया और अंग्रेजी ने रियासतों के प्रशासन में एक स्थान प्राप्त कर लिया था किन्तु वह हिन्दी का स्थान उस प्रकार न ले सकी जैसे अरबी-फारसी हिन्दी का स्थान शताब्दियों के मुगल शासन के उपरान्त भी नहीं ले सकी थी। कानूनों की वाक्यावली सामान्यतः हिन्दी में प्रचलित अरबी-फारसी के शब्दों से बनी है। किन्तु यह तथ्य भुलाया नहीं जा सकता कि रियासत की जनता संस्कृत के तत्सम/तद्भव शब्दों से मिश्रित भाषा का प्रयोग ही करती रही। इसका कारण सम्भवतः यह हो सकता है कि प्रशासन में शताब्दियों से फारसी के प्रचलन के कारण फारसी का स्वाभाविक प्रभुत्व-सा उसी प्रकार बन गया था जैसे आज अंग्रेजी का दिखाई देता है और नौकरी के इच्छुक लोग फारसी के प्रयोग को

1. राजपुताना रेजिडेन्सी नं. 557, वर्नाक्यूलर डिस्पैच रजिस्टर ऑफ दी कापीज ऑफ हिन्दी खरीताज़ एण्ड मिसलेनियस लैटर्स 1863-64 पृ. 75-76, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली

गौरवमय समझते रहे हों जैसे आज के भारत में अंग्रेजी के लिए वातावरण दिखाई देता है। स्वतंत्रता से पूर्व विधि के क्षेत्र में हिन्दी के सीमित प्रयोग का यह भी एक कारण रहा होगा। दूसरे, अंग्रेजी शासनकाल में हिन्दी की ऐसी शब्दावली का अभाव था जो इंगलैंड में पनपी विधि की संकल्पनाओं को अभिव्यक्ति दे सके। पहले फारसी भाषी शासकों ने फारसी का व्यवहार किया था तथा बाद में अंग्रेजी शासकों ने अपनी सुविधानुसार भारतीय भाषा के रूप में 'उर्दू' को स्थान दिया। इस प्रकार विधि और विधायी भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग बहुत कम था। अंग्रजों ने भारतीय भाषा के रूप में उर्दू को स्वीकार कर अंग्रेजी की विधि सम्बन्धी कुछ अनुवाद उर्दू में ही तैयार कराए। इसके साथ ही केन्द्रीय विधायकों और अधिनियमों के उर्दू अनुवाद प्रस्तुत करने की घोषणा की। यह निर्णय हिन्दी के प्रयोग के लिए बाधक था। परिणामस्वरूप, विधि के क्षेत्र से हिन्दी भाषा का स्वतंत्र अस्तित्व जाता रहा। क्योंकि हिन्दी भाषा के क्षेत्रों में विधि और विधायी कार्य उर्दू में होने लगे थे।

सबसे पहले सन् 1897 में नागरी प्रचारिणी सभा काशी की ओर से एक शिष्टमण्डल 'सर एंटनी' से मिला और 1901 में न्यायालयों में देवनागरी लिपि के प्रयोग की अनुमति प्राप्त हो सकी।

विधि क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग : स्वतंत्रता के पश्चात् की स्थिति

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी भाषी प्रदेशों का ध्यान लिपि के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग की ओर गया और सर्वप्रथम 8 अक्टूबर 1947 को उत्तरप्रदेश विधान परिषद की भाषा के रूप में हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को स्वीकार किया गया। कुछ अन्य राज्यों अलवर, इन्दौर, इलाहाबाद, जबलपुर, कोटा आदि में हिन्दी में कार्य करने की पहल की गई किन्तु सही दिशा निर्देश के अभाव में एक प्रकार से 'खिचड़ी' भाषा का प्रयोग होने लगा। इसके साथ ही सम्बन्धित संकल्पनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए हिन्दी में अपेक्षित शब्द राशि का निर्माण नहीं हो पाया। एक और कठिनाई सामने आई वह थी ऐसे व्यक्तियों का अभाव जो विधि क्षेत्र में हिन्दी का

प्रयोग करने में सक्षम हों। सबसे पहले श्री परमेश्वर दयाल श्रीवास्तव ने 'श्रीवास्तव डिक्शनरी' प्रकाशित की जिसमें अंग्रेजी में प्रयुक्त पारिभाषिक विधि के शब्दों को हिन्दी में परिभाषित किया। इसी कड़ी में श्री हरिहर प्रसाद द्विवेदी ने 'शासन शब्द संग्रह' तैयार किया। तदुपरांत साहित्य मनीषी राहुल सांस्कृत्यायन ने 1948 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से प्रशासन शब्दकोश निकाला।

स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। संविधान के अनुच्छेद 343(1) में उपबन्ध है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। अनुच्छेद 345 के अनुसार किसी राज्य का विधानमण्डल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य के सभी या किन्ही शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जानेवाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगा। उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की भाषा के सम्बन्ध में अनुच्छेद 348 खण्ड(1) में यह प्रावधान कर दिया गया कि जब तक संसद द्वारा अन्यथा उपबन्ध न किया जाए तब तक उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय की सभी कार्यवाहियाँ अंग्रेजी भाषा में होंगी। उच्च न्यायालय के सम्बन्ध में इसी अनुच्छेद के खण्ड (2) में छूट दे दी गई है कि किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से हिन्दी भाषा का या उस राज्य में राजकीय प्रयोजन के लिए प्रयोग की जाने वाली किसी भाषा का प्रयोग उस राज्य के उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा।

संविधान के अनुच्छेद 345 द्वारा प्रत्येक राज्य के विधानमण्डल को दिए गए अधिकार का प्रयोग कुछ राज्यों ने करते हुए हिन्दी को राजभाषा के रूप में अंगीकृत किया है। उदाहरण के लिए उत्तरप्रदेश राजभाषा अधिनियम 1951 और मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम 1957 ने हिन्दी को राजभाषा घोषित किया। मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम की धारा 3 के अधीन समय-समय पर जारी की गई अधिसूचनाओं द्वारा अन्य विषयों के साथ ही न्यायालयों की कार्यवाहियों में भी हिन्दी

भाषा के प्रयोग को विनियमित किया गया। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 272 के अधीन अधिकारों का प्रयोग करते हुए कुछ राज्यों ने न्यायालयों के लिए हिन्दी को भाषा घोषित की।उदाहरणार्थ मध्यप्रदेश सरकार की 28 मार्च 1974 की अधिसूचना। उक्त अधिसूचना के अनुसार यह अवधारित किया गया है कि उच्च न्यायालय को छोड़कर इस राज्य के प्रत्येक न्यायालय की भाषा उक्त संहिता के प्रयोजन के लिए हिन्दी होगी। सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 137(2) के अधीन जारी की गई अधिसूचना द्वारा यह घोषित किया गया है कि दि. 26 जनवरी 1977 से उच्च न्यायालय के अधीनस्थ समस्त न्यायालयों की भाषा देवनागरी लिपि में हिन्दी होगी और ऐसे समस्त न्यायालयों को आवेदन तथा ऐसे न्यायालयों में की गई कार्यवाहियाँ देवनागरी लिपि में लिखी जाएंगी। मध्यप्रदेश द्वारा 7 फरवरी 1958 को राज्य की भाषा हिन्दी घोषित कर दिए जाने के पश्चात् दि. 1-6-63 से अधिकांश और दि. 26-1-65 से समस्त विधायी कार्य हिन्दी में ही किया जाने लगा है। विधि के क्षेत्र में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से राज्य ने मूलतः अंग्रेजी में पारित राज्य अधिनियमों के प्राधिकृत पाठ तैयार करने की दृष्टि से मध्यप्रदेश राजभाषा (अनुपूरक उपबंध) अधिनियम 1972 अधिनियमित किया और इस अधिनियम की धारा 3 के अधीन प्राधीकृत हिन्दी पाठ राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित किए जा रहे हैं।[1]

मध्यप्रदेश विधानसभा द्वारा मूलतः हिन्दी में पारित अधिनियमों के द्विभाषिक संस्करण न्यायिक अधिकारियों और विधि व्यवसायियों को उपलब्ध कराने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश शासन के विधि-विभाग द्वारा राज्य अधिनियमों एवं अध्यादेशों के वार्षिक द्विभाषिक संस्करण प्रकाशित किए जाते हैं। उत्तर प्रदेश में राजभाषा अधिनियम 1951 के द्वारा अधिनियमों, नियमों, विनियमों, आदेशों तथा उपविधियों की भाषा

1. श्री सी.पी. श्रीवास्तव, विधि विभाग, मध्यप्रदेश शासन भोपाल द्वारा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा आयोजित गोष्ठी में दिए गए अभिभाषण से उद्धृत

हिन्दी स्वीकृत की जा चुकी है। और राज्य स्तर पर विधान का सभी कार्य हिन्दी में होता है तथा कानूनों के मूल पाठ हिन्दी में ही होते हैं। साथ-ही-साथ संविधान की अपेक्षानुसार राज्यपाल के प्राधिकार से उनका अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित किया जाता है किन्तु वस्तु स्थिति यह है कि कानूनों के प्रारूप मूलतः अंग्रेजी में बनते हैं जिनका अनुवाद करके मूलपाठ तैयार किया जाता है। हिन्दी अनुवादों की भाषा ज्यादातर अस्वभाविक होती है। फलस्वरूप विधि क्षेत्र में चिन्तन तथा प्रारूपण का कार्य हिन्दी में न होकर अंग्रेजी में होता है। आवश्यकता इस बात की है कि मूल पाठ अंग्रेजी में न तैयार होकर हिन्दी में तैयार किए जाएं ताकि विधि क्षेत्र में भी मौलिक चिन्तन हो और जिसके फलस्वरूप ऐसा विधायन हो सके जो इस देश के वातावरण और परिस्थितियों के अनुरूप हो। जनता को न्याय के शासन में अक्षुण्ण रखने के लिए यह आवश्यक है कि उसे उसकी भाषा में न्याय प्रदान किया जाए ताकि वह उसे भली भांति समझ सके।[1]

यद्यपि उत्तरप्रदेश में राजभाषा अधिनियम 1951 में ही पारित हो गया था परन्तु मुंसिफ एवम् न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालयों में हिन्दी का पूर्णरूप से प्रचलन तब से प्रारम्भ नहीं हो सका। देश के स्वतंत्र होने के पश्चात् बहुत से मुंसिफ व मजिस्ट्रेटों ने हिन्दी को अपनाया और उन्होंने अपने निर्णय आदि भी हिन्दी में लिखने प्रारम्भ किए। परन्तु उन्हें उत्साहित करने के स्थान पर हतोत्साहित किया गया। परन्तु आज परिस्थितियां बदल चुकी हैं। जून 1970 से यह व्यवस्था कर दी गई है कि 2000/- रु. के वसूली के सभी विवाद, उनका निष्पादन और उनसे सम्बन्धित सभी कार्यवाहियाँ और फौजदारी सम्बन्धी ऐसे मामलों में जिसमें एक वर्ष तक की सजा दी जा सकती है, का निर्णय हिन्दी में दिया जाए। अगस्त 1976 से मुन्सिफ और न्यायिक मजिस्ट्रेटों द्वारा विचारित समस्त दीवानी और फौजदारी के मुकदमों का निर्णय अनिवार्यतः हिन्दी में देना निश्चित हुआ। आज उत्तरप्रदेश के सभी मुन्सिफ

1. न्यायमूर्ति प्रेमशंकर गुप्त, न्यायाधीश, इलाहाबाद उच्च न्यायालय

व न्यायिक मजिस्ट्रेट अपना अधिकतम कार्य हिन्दी में कर रहे हैं। उनकी तकनीकी कठिनाई को दूर करने के लिए उन्हें हिन्दी के आशुलिपिक भी प्रदान किए गए हैं। जहाँ तक सत्र न्यायालयों, जिला व्यवहार न्यायाधीशों तथा अधीनस्थ अपीली व्यवहार न्यायालयों का प्रश्न है, उनमें हिन्दी में यथोचित प्रगति नहीं हो पायी है। यद्यपि, इन न्यायालयों के अधिवक्तागण मुख्यतः अपना कार्य हिन्दी में ही करते हैं।

उच्च न्यायालय में हिन्दी के प्रवेश के लिए प्रारम्भ में हिन्दी में याचिकाएं, शपथपत्रों आदि को दाखिल करने की छूट दी गई। केन्द्रीय राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 7 में यह प्रावधान है कि राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति से निर्णय, आदेश तथा डिग्री के लिए हिन्दी या क्षेत्रीय भाषा के प्रयोग की अनुमति दी जा सकती है। तदनुसार हिन्दी भाषा-भाषी उच्च-न्यायालयों में भी निर्णय, आदेश तथा डिग्री में हिन्दी के प्रयोग के लिए अनुमति दी गई है। परन्तु व्यावहारिक रूप से अंग्रेजी का वर्चस्व उनमें अभी स्थापित है। इधर कुछ वर्षों से कुछ न्यायाधीश हिन्दीमें निर्णय देने लगे हैं और अब इलाहाबाद उच्च न्यायालय में हिन्दी में दिए गए निर्णयों की संख्या चार अंकों में चल रही है। बहुत से अधिवक्तागण हिन्दी में अपना पक्ष प्रस्तुत करने लगे हैं और कुछ तो बहुत अच्छे स्तर की बहस करते हैं। उत्तर प्रदेश के अलावा राजस्थान, बिहार और मध्यप्रदेश उच्च न्यायालयों में भी कभी-कभी निर्णय हिन्दी में दिए जाते हैं। किन्तु यह सब होते हुए भी न केवल अहिन्दी भाषी उच्च न्यायालयों में बल्कि हिन्दी भाषी उच्च न्यायालयों में भी अंग्रेजी का वर्चस्व कायम है। इस सम्बन्ध में एक कठिनाई यह है कि हिन्दी में दिए गए निर्णयों आदि का प्राधिकृत अंग्रेजी अनुवाद रखना राजभाषा अधिनियम की धारा 7 के अन्तर्गत आवश्यक है।

उच्चतम न्यायालय की कार्यवाही की भाषा संविधान के अनुच्छेद 348(1) में अंग्रेजी ही रखी गई है। यह विडंबना है कि एक ओर तो भारत संघ की राजभाषा अनुच्छेद 343(1) के तहत देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी रखी गई है वहीं उच्चतम न्यायालय, जो उसका ही एक विशिष्ट अंग है, कि भाषा अंग्रेजी रखी गई

है। अगर कहीं कोई कार्य किसी भारतीय भाषा में हुआ हो तो उसके अंग्रेजी अनुवाद के बिना मामला उच्चतम न्यायालय में पेश नहीं हो सकता। उच्चतम न्यायालय में हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग करने की सुविधा यदि दे दी जाए तो किसी भी वर्ग के व्यक्ति को कोई शिकायत नहीं रहेगी और राजभाषा होते हुए भी हिन्दी के लिए उच्चतम न्यायालय को जो निषिद्ध क्षेत्र घोषित कर दिया गया है, वह विडम्बना भी समाप्त हो जाएगी। न्यायमूर्ति श्री रामवृक्ष मिश्र, उच्चतम न्यायालय, ने भी उच्चतम न्यायालय में हिन्दी को वैकल्पिक भाषा के रूप में स्वीकार किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया है।

न्याय तथा न्यायालय का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। विधि, विधायन, विधि-शिक्षा सभी इस विस्तृत क्षेत्र में आते हैं। इस देश की वर्तमान विधि मुख्यतः अंग्रेजी की देन है। वे सभी कानून जो अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित होने के पश्चात् पारित किए गए और निरस्त नहीं किए गए, आज भी लागू हैं। यद्यपि बहुत से अधिनियमों का हिन्दी अनुवाद किया गया, परन्तु अभी भी काफी संख्या में ऐसे अधिनियम हैं जिनका हिन्दी रूपान्तर नहीं हुआ है। जहाँ तक नियमों, विनियमों का सम्बन्ध है उनमें भी थोड़े ही हिन्दी में अनुदित हुए हैं। किन्तु हिन्दी रूपान्तरकार को न उपयुक्त शब्दों के चयन की स्वतंत्रता होती है, और न सुगठित एवम् संतुलित वाक्यों तथा सुस्पष्ट वाक्यांशों के प्रयोग में अपनी कुशलता प्रदर्शित करने का अवसर मिलता है। फलस्वरूप, आज भी न्यायालयों और अधिवक्ताओं के समक्ष यह व्यावहारिक कठिनाई है। जहाँ तक निर्णयों का सम्बन्ध है इसकी सारी विधि अंग्रेजी में है। यह निर्णयज विधि हिन्दी में अप्राप्य है। यह ऐसी कठिन समस्या है जो हिन्दी की प्रगति के लिए बहुत बड़ी बाधा हो रही है। यद्यपि केन्द्रीय विधि साहित्य प्रकाशन दो निर्णय पत्रिकाएं भी 1968 से निकाल रहा है - 'उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका' और 'उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका', किन्तु अभी तक वे विधि-क्षेत्र में इतनी लोकप्रिय नहीं हो पायी हैं, जितनी होनी चाहिए। ये पत्रिकाएं अंग्रेजी निर्णयों के अनुवाद प्रकाशित करती हैं। यह

आम धारणा बन गई है कि जो भाषा इन पत्रिकाओं में प्रयोग की जा रही है वह बोधगम्य नहीं है। अतः इस बात की आवश्यकता है कि विधि साहित्य और निर्णय पत्रिकाएं ऐसी बोधगम्य भाषा का प्रयोग करें कि उन पर क्लिष्टता का आरोप लगाकर उनसे पिण्ड छुड़ाने का प्रयास न किया जा सके जैसा कि कई अधिवक्ता और पीठाधिकारी आमतौर पर करते हैं। न्यायालयों में हिन्दी की प्रगति के लिए अन्य कठिनाई यह है कि इस क्षेत्र में हिन्दी में काम करने वाले व्यक्तियों को विधि साहित्य मुख्यतः अंग्रेजी में उपलब्ध है। अतः इस बात की भी आवश्यकता है कि हिन्दी में अधिकाधिक विधि साहित्य कम मूल्य पर उपलब्ध हो ताकि अधिकाधिक लोग उससे लाभान्वित हो सकें। हालांकि केन्द्रीय विधि मंत्रालय ने अपना विधि साहित्य प्रकाशन विभाग स्थापित किया है, जिसके माध्यम से हिन्दी में विधि साहित्य प्रकाशित किया जा रहा है तथा महत्वपूर्ण विषयों पर हिन्दी में टीकाएं और मीमांसाएं भी निकाली गई हैं किन्तु उनके द्वारा भी अभिष्ट उद्देश्य प्राप्त नहीं हो सका है। निजी प्रकाशकों ने भी इस सम्बन्ध में कुछ कार्य किया है, परन्तु विधिक्षेत्र में अंग्रेजी का वर्चस्व इसकी प्रगति को हतोत्साहित कर रहा है।

विधि क्षेत्र में हिन्दी की प्रगति में एक अड़चन हिन्दी में विधि-अध्ययन का अभाव होना भी है। जिन अधिवक्ताओं या न्यायाधीशों ने विश्वविद्यालय में विधि का अध्ययन हिन्दी में नहीं किया है, उन्हें न्यायालयीन कार्यवाही हिन्दी में करना बहुत कठिन लगता है। यदि विश्वविद्यालयों में एल.एल.बी. उपाधि के लिए अध्ययन हिन्दी में अनिवार्य कर दिया जाए तो विश्वविद्यालय से निकलने वाले स्नातक जब अधिवक्ता और न्यायाधीश बनेंगे तो स्वतः ही समस्त कार्य हिन्दी में करने लगेंगे। किन्तु समस्या यह है कि बहुत कम विषयों पर मानक पुस्तकें हिन्दी में उपलब्ध हैं और जब तक मानक पुस्तकें उपलब्ध नहीं होंगी तब तक विधि का अध्ययन हिन्दी में करना न तो उचित होगा और न ही विश्वविद्यालयों को स्वीकार्य होगा। अतः इस बात की आवश्यकता है कि विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम के अनुसार मानक पुस्तकें उपलब्ध

कराई जाएं। यद्यपि विधि मंत्रालय का राजभाषा खण्ड सक्षम लेखकों को ढूंढ़ने में प्रयासरत रहता है, परन्तु वहाँ कुछ प्रशासनिक और आर्थिक सीमाएं हैं। उसका विकल्प यह हो सकता है कि प्रत्येक विषय के जो प्रख्यात और अनुभवी अध्यापक हैं उनसे मानक पुस्तकें लिखने का अनुरोध किया जाए और इसके लिए उन्हें यथोचित रूप से पुरस्कृत किया जाए। विधि मंत्रालय द्वारा इस सम्बन्ध में एक प्रोत्साहन योजना भी चलाई जा रही है जिसके अनुसार हिन्दी में लिखे गए विधि के मौलिक ग्रंथों पर दस हजार रुपए के दस पुरस्कार प्रत्येक वर्ष दिए जाते हैं। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी में लिखित विधि की पाठ्यपुस्तकों का अनुवाद भी कराया जा रहा है। मानक पाठ्यपुस्तकें हिन्दी में उपलब्ध होने पर विधि अध्ययन को एल.एल.बी. पाठ्यक्रम हिन्दी माध्यम से पढ़ाए जाने की दिशा में आधिकारिक स्तर पर प्रयास किए जा सकते हैं। यदि एल.एल.बी. उपाधि केलिए विधि-अध्ययन हिन्दी में अनिवार्य हो जाएगा तो जो स्नातक हिन्दी के माध्यम से विधि अध्ययन करके अधिवक्ता या न्यायाधीश बनेंगे, वे स्वभावतः हिन्दी में कार्य करेंगे। इस प्रकार हिन्दी का प्रचलन न्याय और विधि के क्षेत्र में स्वतः होने लगेगा।

विधि में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग में एक अन्य समस्या टीकाओं और डाइजेस्टों का पर्याप्त मात्रा में हिन्दी में न होना भी है। विधि के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्व-निर्णयों का महत्वपूर्ण स्थान है। कदम-कदम पर उच्चतम न्यायालय, प्रिवी काउन्सिल और उच्च न्यायालयों के पूर्व निर्णयों के सहारे अधिवक्ता अपने विवाद को सिद्ध करने का प्रयास करते हैं और अपनी बहस की पुष्टि करते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक न्यायाधीश भी अपने निर्णयों की पुष्टि पूर्व-निर्णयों से करते हैं। ये पूर्व निर्णय टीकाओं से मिलते हैं। प्रख्यात विधि वेत्ताओं की लिखी टीकाएं प्रायः अंग्रेजी में हैं। इस प्रकार की टीकाएं हिन्दी में भी उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता है। विधि मंत्रालय के राजभाषा खण्ड ने कुछ मौलिक टीकाएं विधि-विशेषज्ञों से लिखाई भी है किन्तु अभी उनकी संख्या बहुत कम है। पूर्व निर्णयों का क्रमबद्ध संक्षेप तैयार करने से डाइजेस्ट बनते हैं जिनके द्वारा

किसी बिन्दु पर पूर्व-निर्णय हैं या नहीं और यदि है तो कहां है, इसका अध्ययन करने में भरपूर सुविधा मिलती है। डाइजेस्ट के बिना कोई अधिवक्ता या न्यायाधीश कुशलता से कार्य नहीं कर सकता। हिन्दी में विधि डाइजेस्टों का अभाव है। विधि क्षेत्र में इन डाइजेस्टों के महत्व को देखते हुए हिन्दी में भी डाइजेस्ट कुशल लेखकों से प्रस्तुत करवाए जाने चाहिए।

यह भी देखने में आया है कि कुछ न्यायाधीशों के मन में यह धारणा बैठी हुई है कि अंग्रेजी में निर्णय और आदेश प्रदान करने से और सभी कार्यवाही अंग्रेजी में करने से वे अधिक योग्य और दक्ष समझे जाएंगे। यही धारणा अधिवक्ताओं के मन में भी बैठी हुई है कि अंग्रेजी में काम करने से न केवल न्यायालय पर अच्छा प्रभाव पड़ता है वरन् उनके मुवक्किलों पर भी उनकी योग्यता की छाप और रोब पड़ता है। लेकिन न्यायाधीशों व अधिवक्ताओं के मन से यह भ्रम हटाया जाना चाहिए कि उनके निर्णय, आदेश अथवा बहस हिन्दी में होने से उनकी योग्यता का किसी प्रकार कम मूल्यांकन होगा। इस गलत आशंका के कारण ऐसे न्यायाधीश भी जो हिन्दी में कार्य कर सकते हैं, उपर्युक्त भावनाओं के वश में आकर अंग्रेजी में ही काम करते हैं। देखा जाए तो किसी निर्णय का मूल्यांकन इन बातों पर किया जाता है कि न्यायाधीश सही निर्णय पर पहुँचा या नहीं और उस निर्णय तक पहुँचने की उसकी पहुँच कैसी थी और साक्ष्य का किस प्रकार विवेचन किया गया और विश्लेषण करने की न्यायाधीश की क्षमता कैसी है। यह नहीं देखा जाता है कि निर्णय अंग्रेजी में है या हिन्दी में। अतः यह धारणा अर्थहीन है कि अंग्रेजी में लिखे गए निर्णय से न्यायाधीश की विद्वता की कोई छाप पड़ती है।

हिन्दी के सम्बन्ध में सरकार की नीति में एक कमी यह है कि हम अंग्रेजी को साथ-साथ चला रहे हैं। यह प्राकृतिक नियम है कि बड़े पेड़ के साथ छोटा पेड़ पनप नहीं सकता। अतः हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए जरूरी है कि हिन्दी भाषी क्षेत्रों में प्रयोग की भाषा एकमात्र हिन्दी हो। इसके अलावा हिन्दी के मूल रूप में प्रयोग करने

की भी आवश्यकता है जिससे विधि क्षेत्र में चिन्तन हिन्दी में हो और इस भाषा का प्रयोग सम्भाविक रूप से हो न कि अनुवाद की भाषा के रूप में। भाषा स्वाभाविक होने पर इस पर लगा क्लिष्टता का आक्षेप भी दूर हो जाएगा। तीसरे, हिन्दी में विधि साहित्य के सृजन और प्रचार का एक विस्तृत और समयबद्ध कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए जिससे वह स्थिति हम शीघ्र पा लें कि न्यायाधीश और अधिवक्ता केवल हिन्दी के ज्ञान से अपना कार्य चला सकें। सभी कानूनों के हिन्दी पाठ शीघ्रतम उपलब्ध कराए जाएं और नए-नए कानूनों के हिन्दी संस्करण अंग्रेजी के साथ-साथ प्रकाशित किए जाएं। उपयोगी टीकाएं और डाइजेस्ट भी हिन्दी में उपलब्ध कराए जाएं। यह भी आवश्यक है कि उच्चतम स्तर तक हिन्दी का प्रयोग किया जाए। इसके लिए हिन्दी भाषी राज्यों में सभी स्तर के न्यायाधीशों की नियुक्ति में हिन्दी में कार्य करने की योग्यता अनिवार्य कर दी जानी चाहिए। इन सबसे ऊपर है हमारी मानसिकता। यदि हमने अपनी क्षमता और परिश्रम के द्वारा अंग्रेजी में अभिव्यक्ति की योग्यता हासिल कर ली है तो उसी क्षमता व परिश्रम से हम हिन्दी में भी अभिव्यक्ति की योग्यता हासिल कर सकते हैं। इसलिए हमें अपनी मानसिक दासता से मुक्ति पाते हुए बिना किसी भय या संकोच के अपने कार्य में हिन्दी का प्रयोग करने का संकल्प लेना होगा।

संकल्प से कोई कार्य असम्भव नहीं होता। सन् 1932 की बात है। ग्वालियर राज्य में एक विधान परिषद् थी जिसका नाम था 'माजलिस कानून'। उसके अध्यक्ष वहाँ के कानून मंत्री श्री बापू मोहन खोसला थे किन्तु उनकी भाषा फारसी जनित उर्दू थी। परिषद् के एक अधिवेशन में बाबू परमेश्वर दयाल जी ने प्रस्ताव रखा कि अधिनियमों की भाषा भी हिन्दी होनी चाहिए। यह प्रस्ताव आते ही खोसला जी ने उनकी बात यह कहकर काट दी कि हिन्दी में कानूनी अल्फाज़ कहाँ हैं ? कानूनों में हिन्दी जबान कैसे लाई जा सकती है जबकि कोई कानूनी डिक्शनरी अंग्रेजी-हिन्दी की मयस्सर नहीं है। यह सुनते ही बाबू परमेश्वर दयाल ने खड़े होकर घोषणा कर दी कि मैं इस चुनौती को स्वीकार करता हूँ और वचन देता हूँ कि अपनी सीमित योग्यता

और उपलब्धियों के अनुरूप अंग्रेजी, हिन्दी शब्दकोष की रचना करूँगा। दूसरे दिन ही से वे इस कार्य में अथक परिश्रम के साथ जुट गए। बड़ौदा, महाराष्ट्र, बनारस आदि स्थानों पर जा-जाकर उन्होंने इस कार्य में सहायता ली जिनमें बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन और काका कालेलकर के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। शब्दकोष की तैयारी में श्री जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द और पं.हरिहर निवास द्विवेदी ने लगातार सहयोग दिया। फरवरी 1938 में श्रीवास्तवाज़ लॉ डिक्शनरी छपकर तैयार हो गई। यह अंग्रेजी-हिन्दी का प्रथम विधि शब्द कोश था। इसमें प्रत्येक अंग्रेजी शब्द का सर्वप्रथम पर्याय प्रामाणिक और अधिकृत है।[1]

भारत सरकार द्वारा गठित राजभाषा आयोग और उसके बाद पुनर्गठित विधि मंत्रालय के राजभाषा खण्ड ने संविधान और लगभग एक हजार से अधिक अधिनियम के हिन्दी पाठों में असंख्य विधिक शब्दों को मान्यता दी है और उन्हें अंगीकृत किया है उससे यह पूर्णतः सिद्ध हो चुका है कि हिन्दी विधि शब्दावली भी अंग्रेजी जैसी समृद्ध और विपुल है। जिस प्रकार अंग्रेजी में अनेक समानार्थक शब्दों को भिन्न-भिन्न अभिप्राय में मान्यता प्राप्त हो चुकी है उसी प्रकार हिन्दी विधिक भाषा में भी भिन्न - भिन्न प्रामाणिक शब्द हैं। जैसे अंग्रेजी में 'एक्वीटल' और 'डिस्चार्ज' के अर्थ भिन्न हैं उसी प्रकार हिन्दी में 'एक्वीटल' का 'दोषमुक्त' और 'डिस्चार्ज' का 'उन्मोचन' अपने-अपने अर्थ में भिन्न हैं। इसी प्रकार 'इन्टेंशन', 'मोटिव', 'ऑब्जेकट', 'परपज', 'व्यू' साधारण बोलचाल में पर्यायवाची हैं किन्तु विधि भाषा में इनके सबके अर्थ भिन्न हैं। इनके लिए क्रमशः 'आशय', 'हेतु', 'उद्देश्य', 'प्रयोजन', और 'अभिप्राय' शब्द प्राधिकृत है। अतः विधिक क्षेत्र में विशिष्ट शब्दों को विशिष्ट अर्थ में ही समझा जाता है। इस दृष्टि से हिन्दी में विधि विषय पर समृद्धशाली शब्दकोष उपलब्ध हो चुके हैं। इस दिशा में प्रयास निरन्तर जारी हैं। विधायी विभाग (विधि, न्याय एवम् कम्पनी कार्य मंत्रालय) का राजभाषा खण्ड विधि के क्षेत्र में राजभाषा सम्बन्धी सभी कार्यों के

1. श्री शिवदयाल, भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय सुपुत्र बाबू परमेश्वर दयाल के अभिभाषण से उद्धृत

लिए क्रियाशील है। मानक विधि शब्दावली तैयार करना इसी राजभाषा खण्ड का कार्यक्षेत्र है। इसके अलावा यह खण्ड केन्द्रीय अधिनियमों के हिन्दी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं में पाठ तैयार करके भारत के राष्ट्रपति से इन्हें अधिप्रमाणित कराने सम्बन्धी प्रस्तावों पर कार्रवाई क़रता है। राजभाषा ख़ण्ड के अलावा विधायी विभाग का एक और एकक विधि साहित्य प्रकाशन है जिसे विधि के क्षेत्र में हिन्दी भाषा के प्रायोग की अभिवृद्धि का कार्य सौंपा गया है।

विधि साहित्य प्रकाशन ने हिन्दी में दो मासिक पत्रिकाएं - (1) उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका और (2) उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रकाशित करनी प्रारम्भ की। वर्ष 1986 में उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका को दो भागों में बाँट दिया गया - उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका। उच्चतम न्यायालय के रिपोर्ट करने योग्य चुने हुए निर्णय और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांड़िक पत्रिका में सभी उच्च न्यायालयों के चुने गए क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णय होते हैं। विधि साहित्य प्रकाशन एकक विद्यार्थियों, शिक्षकों, वकीलों और न्यायिक अधिकारियों के उपयोग के लिए हिन्दी में विधि की मानक पुस्तकें, सुविख्यात विधि विशेषज्ञों से लिखवाकर प्रकाशित करता है। निजी क्षेत्र के लेखकों और प्रकाशकों को प्रोत्साहित करने के लिए उक्त प्रकाशन विभाग विधि के क्षेत्र में हिन्दी में लिखी गई सर्वोत्तम पुस्तकों पर वार्षिक पुरस्कार देता है। विधि के क्षेत्र में हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए यह प्रकाशन विभाग हिन्दी भाषी क्षेत्रों के विधि महाविद्यालयों, जिला न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और राज्य सरकारों के विधि विभागों में गोष्ठियां आयोजित करता है। विधि साहित्य समाचार नामक एक त्रैमासिक पत्रिका भी प्रकाशित की जाती है जिसमें विधि के क्षेत्र में इस प्रकाशन एकक के विभिन्न कार्यकलापों और प्रकाशनों की विस्तृत जानकारी दी जाती है।

उल्लेखनीय है कि संविधान (58वां संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा राष्ट्रपति को संविधान के हिन्दी अनुवाद को अपने प्राधिकार से प्रकाशित कराने के लिए सशक्त

किया गया है। भारत के संविधान का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 23 अगस्त 1988 को भारत के राजपत्र में प्रकाशित हुआ था। इसके अलावा डॉ. (न्यायमूर्ति) प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी ने हिन्दी भाषा में 'संविधान के मूल तत्व' लिखकर विधि के क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग में अपनी उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। भारत के संविधान पर डॉ. (न्यायमूर्ति) दुर्गादास बसु द्वारा अंग्रेजी में लिखी पुस्तक 'कांस्टीट्यूशन ऑफ इण्डिया-एन इन्ट्रोडक्शन' का अनुवाद 'भारत का संविधान-एक परिचय' श्री ब्रज किशोर शर्मा, निवर्तमान अपर सचिव, विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय, भारत सरकार ने किया। यह पुस्तक हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों, आचार्यों और अन्य विद्वानों के लिए काफी उपादेय सिद्ध हुई है। केन्द्र और राज्य की सिविल सेवाओं व न्यायिक सेवा की परीक्षाओं में बैठने वाले अभ्यर्थियों के लिए भी यह काफी उपयोगी रही है।

केन्द्र सरकार के प्रयासों के साथ-साथ अनेक राज्य सरकारें भी अपने पूर्ण मनोबल से राजभाषा के विधि क्षेत्र में प्रयोग और उसके विकास में लगी हुई है। कई उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश अपना निर्णय हिन्दी के माध्यम से देते हैं। अनेक राज्य सरकारों द्वारा अधिनियमों, विनियमों और अध्यादेशों का अधिनियमन मूलतः हिन्दी में किया जाता है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग जैसी संस्थाएं भी विधि में हिन्दी प्रयोग के प्रोत्साहन में अपना अमूल्य योगदान दे रही हैं। अन्य स्वैच्छिक संस्थाएं भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में जुटी हुई हैं। आज हिन्दी में विधि साहित्य का पर्याप्त विकास हो रहा है। प्रायः सभी विधिक क्षेत्रों में हिन्दी की पर्याप्त पुस्तकें व निर्णयों के हिन्दी अनुवाद उपलब्ध हैं। आवश्यकता इस बात की है उनको प्रयोग में लाया जाए न कि पुस्तकालयों की शोभा मात्र बढ़ाई जाए।

भारत सरकार द्वारा हिन्दी में प्रकाशित कुछ कानूनी पुस्तकों की सूची नीचे दी जा रही है :

1. निजी अन्तरराष्ट्रीय विधि (प्राइवेट इण्टरनेशनल लॉ.),

लेखक : डॉ. पारस दीवान

2. उत्तर प्रदेश भू-धृति विधि (उत्तर प्रदेश लैण्ड टेन्योर लॉ.)
   लेखक : उमेश कुमार
3. मध्य प्रदेश भू-विधि (मध्य प्रदेश लैण्ड लॉ.)
   लेखक : भूतपूर्व न्यायमूर्ति शिवदयाल श्रीवास्तव
4. निर्णय लेखन (जजमेंट राइटिंग)
   लेखक : भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति भगवती प्रसाद बेरी
5. दण्ड विधि के साधारण सिद्धान्त (लॉ ऑफ क्राइम)
   लेखक : डॉ. प्रयाग सिंह
6. अन्तरराष्ट्रीय संगठन (इन्टरनेशनल आरगनाइजेशन)
   लेखक : डॉ. प्रयाग सिंह
7. प्रशासनिक विधि लेखक : कैलाश चन्द्र जोशी
8. चिकित्सा न्यायशास्त्र और विषय विज्ञान (मेडिकल ज्यूरिसप्रूडेन्स एण्ड टॉक्सीकालोजी)
   लेखक : डॉ. सी.के. पारिख, अनुवादक : डॉ. नरेन्द्र कुमार पटोरिया
9. श्रम विधि लेखक : गोपीकृष्ण अरोड़ा
10. भारतीय संविधान के प्रमुख तन्त्र
    लेखक : डॉ. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी
11. मुस्लिम विधि, लेखक : प्रो. हफीजुल रहमान
12. साक्ष्य विधि (लॉ ऑफ एविडेंस)
    लेखक : आर.जी. त्रिवेदी
13. दण्ड प्रक्रिया संहिता लेखक : न्यायमूर्ति महावीर सिंह
14. अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (लॉ ऑफ टार्ट्स)
    लेखक : शर्मनलाल अग्रवाल
15. कम्पनी विधि, लेखक : सुरेन्द्रनाथ

16. संविदा विधि, लेखक : आर.जी. चतुर्वेदी

ख) मासिक विधि निर्णय पत्रिकाएं (हिन्दी में लॉ रिपोर्ट्स)

1. उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका (सुप्रिम कोर्ट लॉ रिपोर्ट्स)

2. उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

3. उच्च न्यायालय दाण्डिक निर्णय पत्रिका

ग) निर्णय सार (डाइजेस्ट)

1. उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका पंचवर्षीय निर्णयसार

2. उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका सप्तवर्षीय निर्णयसारं

घ) विधि साहित्य समाचार

विधि और विधि साहित्य संबन्धी नवीनतम जानकारी के लिए त्रैमासिक पत्रिका।

ङ) अन्य पुस्तकें

1. भारत का संविधान (हिन्दी संस्करण)

2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (द्विभाषी संस्करण)

3. विधि शब्दावली (लीगल ग्लॉसरी)

च) केन्द्रीय अधिनियमों के द्विभाषी (अंग्रेजी-हिन्दी) संस्करण

सिविल प्रक्रिया संहिता - 1908, दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973,
सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम 1982, मालविक्रय अधिनियम 1930, सहित
लगभग 150 पाठ।

(प्रकाशक : विधि साहित्य प्रकाशन,
विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय,
भारत सरकार, नई दिल्ली)

परिशिष्ट

टैक्स आयकर की वसूली विधि से संबंधित विभिन्न न्यायालयों के निर्णय :

1. रिकवरीः बकाया कर की बकाया राशि की वसूली संबंधित विधिक स्थिति (मधु सिलिका प्रा.लि. बनाम आयकर आयुक्त तथा अन्य (1997) 139 टैक्सेशन-36 गुजरात उच्च न्यायालय :)

जहां किसी भी निर्धारण वर्ष के एसेसमेंट आदेश में आयकर अधिकारी ने किन्हीं कारणों से करदाता का कोई क्लेम आदि स्वीकार नहीं किया है और अपील में ऐसा क्लेम स्वीकार कर लिया जाता है, तो उसी क्लेम कोबाद वाले वर्ष में आयकर अधिकारी पुनः अस्वीकार करता है और कहता है कि द्वितीय या अन्य अपील अभी तक इस प्रश्न के संदर्भ में चल रही है तो ऐसा करना उचित है। लेकिन जहाँ तक ऐसे बाद के वर्ष के एसेसमेंट के कारण बनने वाली आयकर की डिमांड का प्रश्न है, उच्च न्यायालय ने अपने आदेश में कहा है कि डिमांड का वह भाग क्लेम से संबंध रखता है उसे फाइनल किसी भी पक्ष में निर्णय हो जाने तक स्टे करना चाहिए।

इस केस के तथ्य

करदाता ने आयकर अधिनियम 1961 की धारा 80 एच एच और धारा 80-'1ए' के अन्तर्गत डिडक्शन की मांग की जो आयकर अधिकारी ने स्वीकार नहीं की लेकिन अपील आयुक्त व ट्राइबुनल ने स्वीकार कर ली। इसके निर्णय के विरुद्ध विभाग ने आगे अपील प्रस्तुत कर रखी है। यह 1990-91 व 1991-92 के कर निर्धारण वर्ष से संबंधित निर्णय थे।

कर निर्धारण वर्ष 1992-93 व 1993-94 में भी विभाग ने यही क्लेम स्वीकार नहीं किए। करदाता ने अधिनियम की धारा 220(6) के अन्तर्गत डिमांड को स्टे करने के लिए आवेदन पत्र प्रस्तुत किया, और कहा कि क्योंकि यह प्रश्न करदाता के हक में पूर्व में तय हो चुका है, इसलिए केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर मंडल (सी.बी.डी.टी.) के

सरकूलर नं. 530 व 589 दिनांक 6 मार्च 1981 व 16-1-91 में दिए गए निर्देशों के अनुसार पूरी डिमांड स्टे की जानी चाहिए क्योंकि पूरी ड़िमांड केवल मांगे गए विवादाग्रस्त डिडक्शन नहीं देने के कारण ही बनी है।

आयकर अधिकारी का निर्णय

धारा 220 (6) आयकर अधिनियम 1961 के अन्तर्गत प्रस्तुत आवेदन पत्र पर अपना निर्णय देते हुए आयकर अधिकारी ने कहा कि यदि करदाता 20% टैक्स भर देता है तो 80% स्टे किया जाता है।

करदाता द्वारा न्यायालय में विशेष सिविल आवेदन प्रस्तुत किया गया

उच्च न्यायालय ने कहा कि सी.बी.डी.टी. के सरकूलर नं. 530 और नं. 589 दिनांक 6 मार्च 1981 व 16 जनवरी 1991 में दिए गए निर्देशों की पालना आयकर अधिकारियों को अनिवार्य रूप से करनी चाहिए। सी.बी.डी.टी. ने स्पष्ट निर्देश दिए हैं कि जहाँ ऐसे प्रश्न पैदा होते हैं, वहाँ डिमांड को स्टे करना अनिवार्य है।

2. **रिकवरी-प्रथम अपील पेंडिंग-आयुक्त (अपील्स) के समक्ष भी स्टे आवेदन पेंडिंग : रिकवरी को स्टे कर-आयुक्त (अपील्स) से आवेदन देने हेतु पाबंद किया। (प्रदीप रत्नाशि बनाम सहायक आयुक्त (1997) 139 टैक्सेशन-248 (केरला उच्च न्यायालय) :**

केस के तथ्य : (I) करदाता ने एसेसमेंट आर्डर के विरुद्ध आयकर आयुक्त (अपील्स) के समक्ष अपील प्रस्तुत करके तथा डिमांड की रिक़वरी को स्टे करने के लिए भी साथ ही आवेदन पत्र प्रस्तुत किया। (II) साथ ही आयकर आयुक्त के समक्ष भी आयकर अधिनियम 1961 की धारा 220 (6) के अन्तर्गत आवेदन करके निवेदन किया कि अपील के निर्णय तक आयकर की डिमाण्ड की राशि की वसूली न करने के आदेश पारित किए जावें। आयुक्त ने 50 प्रतिशत टैक्स अभी और बाकी पाँच मासिक किश्तों में जमा करने का फैसला दिया। इस पर करदाता ने उच्च न्यायालय के समक्ष वाद प्रस्तुत किया।

उच्च न्यायालय का निर्णय :

1) उपरोक्त वर्णित परिस्थितियों के अध्ययन तथा केस के अन्य पहलुओं पर विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में कहा कि :

ए) जहां तक आयकर अधिनियम 1961 की धारा 220(6) के अन्तर्गत टैक्स की रिकवरी रोकने के अधिकार का प्रश्न है वो अधिकार केवल एसेसिंग ऑथोरिटी के पास ही है। कमिश्नर को धारा 220 (6) के अन्तर्गत कोई अधिकार नहीं दिए गए हैं, अतः कमिश्नर का आदेश बिना अधिकार क्षेत्र के पारित किया हुआ आदेश है, अतः अवैध है।

बी) आयकर आयुक्त (अपील्स) के समक्ष जो स्टे का आवेदन प्रस्तुत किया गया है वो अपील प्रस्तुत करने के कारण किया गया है वो धारा 220(6) के अन्तर्गत नहीं है। अतः उच्च न्यायालय ने अपना निर्णय करदाता के पक्ष में देते हुए कहा कि आयुक्त (अपील्स) अपना निर्णय स्टे आवेदन पर शीघ्र दे, और जब तक निर्णय नहीं हो जाता है, उच्च न्यायालय ने रिकवरी को स्टे किया।

3. रिकवरी एटेचमेंट रिट याचिका (कृष्ण प्रसाद सिंह तथा अन्य बनाम टी.आर.ओ. तथा अन्य (1997) 139 टैक्सेशन-363 कलकत्ता उच्च न्यायालय :

करदाता ने संपत्ती (शेयर्स) के एटेचमेंट के आर्डर के विरुद्ध एटेचमेंट(कुर्की) को अवैध घोषित करवाने के लिए कलकत्ता उच्च न्यायालय में रिट याचिका प्रस्तुत की। इस रिट याचिका को एडमिट करने के विरोध में टी.आर.ओ. के वकील ने निम्न तर्क दिए :

1) क्योंकि द्वितीय अनुसूचि के नियम 86 के अन्तर्गत करदाता को अपील करने का अधिकार है। अतः आल्टरनेटिव रेमेडि उपलब्ध होने की वजह से रिट याचिका को खारिज किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय ने कहा कि अपील का अधिकार

केवल उन स्थितियों में बनता है जबकि एटेचमेंट का आर्डर पूर्ण नहीं हो, आंशिक हो। अतः एटेचमेंट जहां कर दिया गया है वहां अपील का कोई अधिकार नहीं है। इसलिए रिट याचिका स्वीकार्य है। साथ ही उच्च न्यायालय ने यह भी कहा कि अब विधि स्थिति इस संबंध में स्पष्ट हो चुकी है कि यदि किसी भी मामले में आल्टरनेटिव रमेडि है भी तो इसका उपलब्ध होना रिट याचिका स्वीकार न करने के लिए कोई कारण नहीं बनता है।

उच्च न्यायालय ने आनन्दीलाल (1994) 208 आइ.टी.आर.-46 के केस में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का हवाला देते हुए कहा कि 'The Tax Recovery Officer can only deal with the question as to in whose possession the said shares were at time of the attachment and on whose account the same were held.'

उच्च न्यायालय ने कहा कि शेयर क्योंकि एटेचमेंट से पूर्व ट्रान्सफर हो चुके हैं तथा अन्य के नाम रजिस्टर हो चुके हैं, अतः करदाता उनका मालिक नहीं है और ऐसे शेयरों को कुर्क करना विधि मान्य नहीं है अतः रिट-याचिका स्वीकार की गई।

4. रिकवरी कंपनी के बकाटा टैक्स की पूर्व के डाइरेक्टर से रिकवरी : क्या उचित है। डाइरेक्टर का पूरा वेतन क्या कुर्क किया जा सकता है। (दर्शन कुमार बनाम आयकर आयुक्त तथा अन्य (1987) 139 टैक्सेशन-670 पंजाब एण्ड हरियाणा उच्च न्यायालय :

कंपनी के बक़ाया टैक्स की वसूली पूर्व के डाइरेक्टरों से की जा सकती है। कंपनी का बकाया टैक्स अदा करने का सभी डाइरेक्टर्स का जाइंट तथा प्रत्येक डाइरेक्टर का अलग (सेपरेट) दायित्व है। जिस पीरियड यानि जिस वर्ष से आयकर की बकाया राशि का संबंध है, उस वर्ष में जो भी डाइरेक्टर रहे हैं, उनकी स्वयं की संपत्ति से कुर्की के द्वारा कंपनी के बकाया टैक्स की वसूली हो सकती है। (धारा 179 (1) आयकर अधिनियम 1961)

ऐसा डाइरेक्टर यदि कहीं सर्विस करता है और वेतन से आय अर्जित करता है,

तो वेतन की राशि को कंपनी के बकाया टैक्स की वसूली के लिए कुर्क किया जा सकता है।

लेकिन :

उच्च न्यायालय के समक्ष डाइरेक्टर के वकील ने यह तर्क दिया कि पूरा वेतन कुर्क नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय के करदाता के वकील के इस तर्क को स्वीकार करते हुए कहा कि सिविल प्रोसिजर कोड (सी.पी.सी.) की धारा 60 में इस संबंध में नियम है, और वेतन को कुर्क करने की कार्यवाही उस धारा के प्रावधानों के अनुसार ही की जावे।

5. **रिकवरी : स्टे : करदाता के केस में ट्राइबुनल के समक्ष अपील और स्टे दोनों पेंडिंग, बावजूद इसके उच्च न्यायालय ने 3 माह की अवधि के लिए स्टे दिया :**

मोडर्न थ्रेड्स इन्डिया लि. बनाम भारत सरकार (1997) 139 सी.टी.आर. - 469 राजस्थान उच्च न्यायालय :

6. **रिकवरी ऑफ टैक्स स्टे : ब्लोक एसेसमेंट ट्राइबुनल का कर्तव्य : (अशोक कुमार अग्रवाल बनाम आयकर ट्राइबुनल तथा अन्य (1997) 140 टैक्सेशन-573 देहली उच्च न्यायालय :**

करदाता के मामले में तलाशी हुई थी और इस कारण आयकर अधिनियम की धारा 158 बी सी के अन्तर्गत ब्लोक एसेसमेंट करके रु. 13,13,40,778 की आय तय करके 7,88,000,00 की डिमांड खड़ी करके मांग पत्र जारी किया गया। विभाग के इस निर्णय के विरुद्ध करदाता की ट्राइबुनल के समक्ष अपील पेंडिंग क्योंकि चल रही थी, इसलिए करदाता ने आयकर आयुक्त के समक्ष स्टे का आवेदन प्रस्तुत कर कहा कि क्योंकि अपील पेंडिंग है अतः अपील के फैसले तक इस डिमांड को स्टे किया जावे।

आयकर आयुक्त का आदेश :

आयकर आयुक्त के इस डिमांड को इस शर्त पर स्टे किया कि करदाता कुल

डिमांड का 10% यानि 78.8 लाख रुपये का भुगतान कर दे।

ट्राइबुनल के समक्ष भी स्टे का आवेदन किया गया था :

करदाता ने ट्राइबुनल के समक्ष भी स्टे का आवेदन किया था। इस आवेदन को ट्राइबुनल ने खारिज करते हुए कहा कि क्योंकि आयुक्त ने स्टे दे दिया है अतः ट्राइबुनल स्टे देने में असमर्थ है।

ट्राइबुनल के समक्ष करदाता का तर्क निम्न प्रकार था :

"The contention of the petitioner before the Tribunal was that the assessee is entitled to a complete stay of the demand since he has good PRIMA-FACIE case and the balance of convenience is also in his favour."

ट्राइबुनल के निर्णय के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील :

उच्च न्यायालय के समक्ष करदाता के विद्वान् वकील ने अपना तर्क देते हुए कहा कि श्री बालाजी ट्रेडिंग कं. बनाम उप कामर्शियल टैक्सेज अधिकारी (1989) 175 आइ.टी.आर.-428 के केस में मद्रास उच्च न्यायालय ने कहा कि इस निर्णय में जिन aspects required to be considered by the Appellate Authority at the time of passing an order on stay application' का वर्णन है। ट्राइबुनल ने उनका पालन नहीं किया है। उच्च न्यायालय के समक्ष करदाता के विद्वान वकील ने कहा कि जहाँ तक आर्थिक तंगी, पैसों की कमी, वित्तीय स्थिति खराब आदि कारणों का प्रश्न है डिमांड को स्टे करने के लिए ये अच्छे आधार हैं, ऐसा इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने श्रीमती मनी गोयल बनाम आयकर आयुक्त (1996) 217 आइ.टी.आर.641 के निर्णय में कहा है।

उच्च न्यायालय ने केस को पुनः विचार हेतु ट्राइबुनल को भेजकर कहा कि मात्र इस आधार पर ट्राइबुनल स्टे के आवेदन को खारिज नहीं कर सकता कि आयुक्त ने स्टे दे दिया है। ट्राइबुनल को विधिअनुसार अपना निर्णय केस के तथ्यों व परिस्थितियों को मद्देनजर रखते हुए देना चाहिए।

7. रिकवरी ऑफ टैक्स–केवल डिफाल्टर की अचल संपत्ति को ही एटेच किया जा सकता है : अन्य संपत्ति को एटेच नहीं किया जा सकता। पति के बकाया टैक्स की वसूली के लिए पत्नी की जायदाद का एटेचमेंट : अवैध : पी. के. कुंजुम्मा ब नाम टैक्स रिकवरी आफिसर (1997) 227 आइ.टी.आर.–852 केरला उच्च न्यायालय :

टैक्स रिकवरी आफिसर ने पत्नी की अचल संपत्ति को एटेच करके कहा कि क्योंकि उसके पति से टैक्स रिकवर करना है अतः वो पत्नी की संपत्ति बेचकर यह वसूली करेगा। पत्नी ने जवाब में कहा कि जिस संपत्ति को एटेच किया है वो उसकी स्वयं की स्त्री धन संपत्ति है पति का उस संपत्ति से कोई लेना देना नहीं है, अतः एटेचमेंट अवैध है। टी.आर.ओ. ने इस उत्तर को नहीं माना और संपत्ति के बेचान की कार्यवाही चालू रखी।

इस पर श्रीमती कुंजुम्मा ने उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका प्रस्तुत कर कहा कि इस अवैध कार्यवाही को समाप्त किया जावे। उच्च न्यायालय ने इस रिट याचिका को स्वीकार करते हुए कहा कि अनुसूची द्वितीय के नियम 48 में जो प्रावधान है उसके अनुसार केवल डिफाल्टर की संपत्ति को एटेच किया जा सकता है। कोई भी व्यक्ति डिफाल्टर तब बनता है जब कि टी.आर.ओ. द्वारा जारी किए गए सर्टिफिकेट में उस व्यक्ति का नाम हो। धारा 222 आयकर अधिनियम के अन्तर्गत डिफाल्टर वो ही हो सकता है जिसने डिमांड नोटिस प्राप्त होने के पश्चात् कर का भुगतान नहीं किया है। अतः रिट याचिका को स्वीकार करके एटेचमेंट की कार्यवाही को अवैध घोषित किया गया।